National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2026; 1(66): 140-144
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. निधि उप्रेती
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय,
देहरादून

Correspondence:
डॉ. निधि उप्रेती
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय,
देहरादून

केदारखण्ड में हिमालय की सांस्कृतिक अवधारणा और पर्यावरण संरक्षण : एक शोध अध्ययन

डॉ. निधि उप्रेती

सारांश: वर्तमान युग में हिमालय की पारिस्थितिकीय महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। हिमालय न केवल विशाल पर्वतमाला है, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक परंपराओं में इसे "देवात्मा" माना गया है। शाक्त परम्परा के 'केदारखण्ड' ग्रंथ में हिमालय, नदियाँ एवं वन प्राकृतिक देवत्व के रूप में प्रस्तुत होते हैं। यह शोध-पत्र इको-क्रिटिकल दृष्टिकोण तथा सांस्कृतिक पारिस्थितिकी के सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य में *केदारखण्ड* में पर्यावरणीय चेतना की खोज करता है। इसके प्रमुख उद्देश्य हैं केदारखण्ड में हिमालय की देवात्मा अवधारणा का विश्लेषण, नदियों एवं वनस्पतियों के रूपक द्वारा जैव-विविधता संकेतों की पहचान, तीर्थपरम्पराओं से जुड़ी प्रकृति-रक्षा व्यवहारों का उद्घाटन, तथा समकालीन हिमालयी पर्यावरणीय चुनौतियों (जैसे ग्लेशियरपिघलन, पर्यटन दबाव, चारधाम परियोजना, भूस्खलन आदि) की पड़ताल। साथ ही शोध-पत्र वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक स्रोतों (स्कन्दपुराण, दुर्गा सप्तशती, पर्यावरणीय शोध रिपोर्ट आदि) पर आधारित नीतिगत सुझाव भी प्रस्तुत करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि केदारखण्ड हिमालय, नदियों और वनों की पवित्रता को रेखांकित कर मानव-प्रकृति के सह-अस्तित्व का संदेश देता है। आधुनिक संकटों के समाधान हेतु इन सांस्कृतिक अवधारणाओं को पुनः जीवन्त करना आवश्यक है।

कुंजी शब्द: केदारखण्ड, हिमालय, पर्यावरण संरक्षण, सांस्कृतिक पारिस्थितिकी, इको-क्रिटिसिज्म, स्कन्दपुराण, देवभूमि।

प्रस्तावना

हिमालय पर्वतमाला भारतीय संस्कृति में ऐतिहासिक और आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसे ऋषि-मुनियों की तपस्थली, देवताओं का निवास एवं मानव-जाति का रक्षक माना गया है। शाक्त परम्परा में हिमालय देवात्मा यानि "देवी की स्वरूप धरण" है। *केदारखण्ड* (स्कन्दपुराण) में केदारनाथ एवं आसपास की पवित्र स्थलों का विस्तृत वर्णन है, जहाँ हिमालय, नदियाँ और वन तीर्थों के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

विगत दशकों में ग्लोबल वार्मिंग एवं मानव गतिविधियों ने हिमालय की पारिस्थितिकी को गम्भीर क्षति पहुँचाई है। उत्तराखण्ड में ग्लेशियर का तेज़ी से पिघलना, पर्यटन की बढ़ती मांग, चारधाम सड़क निर्माण जैसी परियोजनाएँ पारिस्थितिकीय असंतुलन और प्राकृतिक आपदाओं (भूस्खलन, बाढ़ आदि) की आवृत्ति में वृद्धि का कारण बन रही हैं। ऐसे में हिमालय-संबंधी सांस्कृतिक चेतना और धार्मिक ग्रन्थों में निहित पर्यावरणीय संकेतों की प्रासंगिकता दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है।

यह शोध-पत्र **केदारखण्ड में हिमालय की सांस्कृतिक अवधारणा एवं पर्यावरण संरक्षण** की परिधि में तैयार किया गया है। उद्देश्य है कि प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों में निहित पर्यावरणीय मूल्यों को वर्तमान समस्या समाधान के संदर्भ में उजागर किया जाए।

शोध के उद्देश्य

इस शोध-पत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. **केदारखण्ड में हिमालय की देवात्मा अवधारणा** का विश्लेषण करना।
2. **केदारखण्ड में नदियाँ एवं वन** (जैसे मंदाकिनी, शिवाराग नदी, हिमालय के तपोवन इत्यादि) की सांस्कृतिक छवि तथा जैव-विविधता संकेतों की पहचान करना।
3. **तीर्थपरम्पराओं से जुड़े संरक्षण व्यवहारों** का अध्ययन (जैसे स्वच्छता-अनुष्ठान, पवित्र स्थलों की रक्षा संबंधी नियम) तथा उनकी आधुनिक समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन।
4. **समकालीन हिमालयी पर्यावरणीय चुनौतियाँ** (जैसे ग्लेशियर पिघलना, पर्यटन प्रभाव, चारधाम परियोजना, वन-क्षरण एवं भूस्खलन) पर *केदारखण्ड* में निहित संदेशों के दृष्टिगत विचार-विमर्श करना।
5. **सांस्कृतिक नीतिगत सुझाव एवं व्यवहारिक अनुशंसाएँ** प्रस्तावित करना, जिससे स्थानीय प्रशासन और समाज प्राचीन भारतीय परम्पराओं की प्रेरणा से पर्यावरण संरक्षण उपाय अपना सके।

सैद्धान्तिक ढांचा

इस शोध में इको-क्रिटिसिज्म (पर्यावरण-आलोचना) तथा सांस्कृतिक पारिस्थितिकी का सैद्धान्तिक आधार लिया गया है। इको-क्रिटिसिज्म साहित्य और भौतिक पर्यावरण के बीच अंतर्सम्बन्ध का अध्ययन है। Glotfelty के अनुसार, "इको-क्रिटिसिज्म साहित्य और भौतिक पर्यावरण के मध्य संबंध का अध्ययन है"। सांस्कृतिक पारिस्थितिकी का दृष्टिकोण मानव-संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश के पर्यावरणीय अन्तर्सम्बन्धों को समझता है, जैसे-जैसे मानव समाज विकसित होता है, उसके रीति-रिवाज, मान्यताएँ एवं परम्पराएँ उसके परिवेश द्वारा प्रभावित होती हैं और प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से उसका परित्याग करते समय पर्यावरणीय परिणाम भी सामने आते हैं। यद्यपि *केदारखण्ड* सीधे पर्यावरणवादी ग्रन्थ नहीं है, तथापि इको-क्रिटिकल दृष्टि से अध्ययन करने पर इसमें प्रकृति के साथ आदर-संवेदनशीलता के संदेश मिलते हैं। Eco-feminism (इको-फेमिनिज्म) भी प्रासंगिक है, जहाँ स्त्री-शक्ति एवं प्रकृति के सम्बंधित दोहन के समष्टिगत रिश्ते पर विचार होता है। भारतीय देवी-पूजा में स्त्री और प्रकृति के एकत्व को माना गया है, जिससे प्राकृतिक संरक्षण के भाव पैदा होते हैं।

स्रोत-आधार और शोध-पद्धति

शोध के लिए *प्राथमिक स्रोत* के रूप में **स्कन्दपुराण (केदारखण्ड)** तथा **दुर्गा सप्तशती (दुर्गा कवच)** को प्रमुखता दी गई है। इन ग्रन्थों में हिमालय और नदियों का वर्णन, देवी-पूजा तथा तीर्थ-संस्कृति का विवरण मिलता है। *द्वितीयक स्रोतों* में आधुनिक शोध-लेख, पुस्तकें और रिपोर्टों का उपयोग हुआ है। विशेषतः उत्तराखण्ड/हिमालयी पर्यावरण पर प्रकाशित लेख (India Water Portal, DownToEarth) तथा नीति-निर्माण दस्तावेज (हिमालयी प्रदेशों की नीति) को उद्धृत किया गया है।

शोध-पद्धति में **पाठ विश्लेषण** मुख्य भूमिका में है। स्कन्दपुराण के केदारखण्ड से संबंधित श्लोकों का संकलन और उनका अर्थ-बोध किया गया है। अनुवाद एवं व्याख्या हिंदी या इंग्लिश माध्यमों से की गई है। इसके अतिरिक्त तुलनात्मक अध्ययन के लिए वर्तमान काल की रिपोर्टों से आकड़े एवं निष्कर्ष जोड़े गए हैं। जहां संभव हो, संस्कृत श्लोक सहित मूल संदर्भ दिए गए हैं।

केदारखण्ड में हिमालय का देवात्मा स्वरूप

केदारखण्ड में **हिमालय** को केवल भौतिक पर्वतशृंखला नहीं, बल्कि *देवात्मा* यानी देवी-देवताओं का आवास और तप-तत्त्वों का केन्द्र माना गया है। उत्तराखण्ड की त्रिवेणी संगम घाटियाँ इसे "हिमालय का हृदय" कहती हैं। वाङ्मय में भी हिमालय को ऋषियों, देवताओं एवं तपस्वियों की पुण्यभूमि माना गया है, इसलिए इसे स्वर्ग तुल्य कहा गया है।

केदारखण्ड में **केदारनाथ** धाम का वर्णन मिलता है—यह हिमालय की एक प्रमुख चोटी "केदारशृंग" पर स्थित है। शिवपुराण में भी केदारनाथ को *हिमवान्* कहा गया है। इस कथा-अध्यायानुसार, जब शिवगण इन्द्र से पूछते हैं "के दारयामि?" (मैं किसे पानी में डुबाऊँ?) तो इस क्षेत्र का नाम "केदार" पड़ा। अर्थात् शिव के संवाद से ही इस स्थल की पवित्रता स्थापित हुई।

अध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य से हिमालय को देवभूमि मानने की बात के उदाहरण मिलते हैं: **औपनिषदिक** ग्रन्थों में हिमालय-क्षेत्र का वर्णन दिव्य चेतना का केन्द्र बताकर हुआ है। उदाहरणतः गौतमपुराण (प्रज्ञोपनिषद) में 'देवात्मा हिमालय' का विचार आता है कि हिमालय में देवी-देवताओं की शक्तियां वास करती हैं। आधुनिक अध्यात्म विज्ञान में भी हिमालय को "दैवी चेतना की निवासस्थली" माना जाता है। इसी दृष्टि से उत्तरी हिमालय, विशेषकर उत्तराखण्ड की घाटियाँ, भारतीय संस्कृति के विकास में आरंभिक केंद्र रही हैं।

इस प्रकार **केदारखण्ड** में हिमालय एक **पवित्र पर्वतमाला** के रूप में चित्रित है जहाँ शिव, पार्वती, अन्य देव आदि निवास करते हैं। हिमालय की अति ऊंचाई, बर्फ़ाच्छादित चोटियाँ और कठिन पर्वतराज इसे 'देवतंत्र' बनाते हैं। इस धार्मिक मान्यता के कारण लोगों ने हिमालय को स्वच्छ और संरक्षित रखने का भाव जन्मजात माना।

केदारखण्ड में नदियाँ एवं वन : जैव-विविधता के संकेत

केदारखण्ड में **नदियों** और **वनों** को माता और तपोभूमि के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। प्रमुखतः **मंदाकिनी नदी** और उसके सहायक चैनल का उल्लेख मिलता है। उदाहरणतः *विलुप्त होती गंगा* शीर्ष लेख में उद्धृत है कि शिव पार्वती से कहते हैं:

"मया मुक्तापि सा धारा श्रीमुखे गिरौ। तस्या प्रवाह वेगेन खण्डिता वहवोऽद्रव॥" *(केदारखण्ड 35/41)*

इस श्लोक का भाव है – "मेरे द्वारा छोड़ी गई गंगा की धारा श्रीमुख नामक पर्वत पर अवतरित हुई; गंगा के तीव्र प्रवाह से अनेक पर्वत खंडित हो गए।" यह दर्शाता है कि यहाँ की नदी-धारा (गंगा) हिमालय की चोटियों से प्रस्फुटित होती है और अत्यंत वेगवान है। गंगा के तेज प्रवाह से पर्वत खंडित होना मानव-निर्मित पर्यावरणीय आपदाओं से संबंधित नहीं, बल्कि प्राकृतिक प्रस्फोटित ऊर्जा का सूक्ष्म रूपक प्रतीत होता है। किंतु औपनिवेशिक युग के बाद विकास के चलते गंगा की सहायक छोटी नदियाँ सूख रही हैं, जो *विलुप्त होती गंगा* लेख में आगाह किया गया है। इस संदर्भ में तकनीकी योगदान कम पर सांस्कृतिक चेतना अधिक है कि नदियों का ध्यान रखना एक परम कर्तव्य है।

वनस्पतियाँ और **वन-क्षेत्र** के संरक्षण की भावना भी केदारखण्ड में निहित है। ग्रन्थ विभिन्न स्थानों पर वन-तप्त ऋषियों, तपोवनों का उल्लेख करता है जहां देवी-देवताओं की गाथाएँ गाई जाती हैं। पर्वतीय जैवविविधता के प्रतीकों के रूप में वृक्षों, जड़ी-बूटियों, फूलों का भी उल्लेख मिलता है। उदाहरणतः गढ़वाली हरी-भरी वन-थलियों में ऋषियों की तपस्थलियों का विवरण है, जिससे यह संदेश जाता है कि प्राकृतिक हरियाली को विधिवत सुरक्षित रखना चाहिए।

ये प्राकृतिक प्रतीक *आध्यात्मिक अर्थ* भी रखते हैं: वन, पर्वत और नदियाँ देवी शक्ति के विभिन्न अवतार हैं। अतः केदारखण्ड में निहित वन एवं नदीवर्णन जैवविविधता के पावन महत्व को रेखांकित करता है। इसे **इको-क्रिटिकल दृष्टि से** देखा जाए तो, प्राचीन ग्रन्थ स्वयं पर्यावरणीय चेतना के स्रोत हैं।

जैव-विविधता और पारिस्थितिक संकेत

केदारखण्ड में हिमालयी पारिस्थितिकी के कुछ संकेत भी दिये गए हैं। उदाहरणार्थ, कवच तथा अन्य अध्यायों में दुर्गा एवं शिव के वाहन व स्वामिनी जीवों (मयूर, गरुड़, गज, वराह आदि) का वर्णन है; ये सभी जीव-जंतुओं की विविधता की ओर संकेत करते हैं। हिमालय की जैवविविधता (जैसे हिमालयी सिंह, शेर, चील, विचित्र पुष्प आदि) प्राचीन मान्यताओं में पवित्र मानी गई है। नदी की तेज़ धार (जैसे श्रीमुख की गंगा) को वैदिक त्रिपथगा का नाम भी दिया गया है, जिससे यह विश्वास उभरता है कि हिमालय-नदियाँ तीन लोक (स्वर्ग, पृथ्वी, पाताल) में व्याप्त हैं। इसके द्वारा यह अहसास होता है कि हिमालय की नदियाँ पूरे पारिस्थितिक तंत्र का आधार हैं और उनका संरक्षण माँ भारती के कल्याण के लिए आवश्यक है।

आधुनिक दृष्टि से देखें तो केदारखण्ड के वन एवं पहाड़ी पारिस्थितिकी **अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र** में हैं। यहाँ की जैव-विविधता में मुख्य है देवदार, खनकुश (पाइन), काफल, घुरुंध आदि वृक्ष, तथा हिमालयी वन्यजीव (भालू, कुक्कुट) शामिल हैं। इन संसाधनों का परम्परागत उपयोग तीर्थयात्रा और स्थानीय जीवन में हुआ करता था। किंतु आज औद्योगीकरण एवं पर्यटन के दबाव से ये घट रहे हैं। *इकोफेमिनिज्म* के दृष्टिकोण से यह भी देखा गया है कि हिमालयी वन्यजीवों पर निर्भर स्थानीय स्त्रियाँ पारंपरिक ज्ञान (जड़ी-बूटी आदि) की संरक्षिका रही हैं।

तीर्थ-आधारित संरक्षण व्यवहार

भारतीय तीर्थयात्रा परम्परा में स्वच्छता एवं संरक्षण को नैतिक कर्तव्य माना गया है। केदारखण्ड जैसे तीर्थमाहात्म्यों में तीर्थयात्रियों को प्रकृति की रक्षा हेतु विशेष नियम याद दिलाये जाते हैं। उदाहरणतः चारधाम मार्ग पर पारदर्शिता सुनिश्चित करने और गाड़ियों से धुएँ के उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए पर्यावरण प्राधिकारणों ने *ग्रीन टैक्स* लागू किया है। साथ ही, "देवभूमि उत्तराखण्ड" जैसे स्वच्छता अभियान चल रहे हैं, जिनमें कहा जाता है – *"प्रसाद से अधिक पुण्य स्वच्छता में है, दर्शन से अधिक सेवा-परिरक्षण में है"*. यह भाव दर्शाता है कि भक्तों को प्रकृति-सहेज को सेवा के रूप में मानते हुए पर्यावरण संरक्षण की सीख दी जाती है।

तीर्थयात्रा परम्परा में अक्सर **संरक्षण भाव** को नैतिक ग्रंथों के माध्यम से भी उतारा गया है। केदारखण्ड में कहा गया है कि पवित्र स्नान एवं तीर्थाटन से प्राप्त पुण्य से बढ़कर तीर्थ की पवित्रता बनाए रखना ही वास्तविक सेवा है। दुर्भाग्यवश, आधुनिक तीर्थयात्रा में इन परम्पराओं का पालन सदा नहीं होता। अतः आधुनिक प्रशासन द्वारा मंदिरों के आसपास कचरा प्रबंधन, बायो-डिग्रेडेबल सुविधाएँ उपलब्ध कराना आदि प्रयास किये जा रहे हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से यह यथार्थ है कि यदि भक्तों को माता-पृथ्वी के प्रति आदर भाव से जोड़ा जाए तो इनके सहयोग से तीर्थस्थलों का संरक्षण बेहतर तरीके से हो सकेगा।

समकालीन पर्यावरणीय चुनौतियाँ

आज हिमालय **ग्लोबल वार्मिंग** के कारण अत्यधिक संवेदनशील है। उत्तराखण्ड के लगभग 900 ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं। वाडिया संस्थान के अध्ययन अनुसार गंगोत्री, सतोपंथ, भागीरथी जैसे ग्लेशियर चिंताजनक गति से सिकुड़ रहे हैं। इसके परिणाम स्वरूप हिमालय में अचानक ग्लेशियरीय बाढ़, मूसलाधार बारिश एवं भूस्खलन जैसी आपदाएँ बढ़ी हैं। उदाहरणस्वरूप, 2013 केदारनाथ आपदा में तेज बादलफट तथा हिमनदी फटने के कारण व्यापक विनाश हुआ।

पर्यटन दबाव भी चुनौती बना हुआ है। चारधाम सड़क परियोजना ने पहाड़ी ढलानों का बड़े पैमाने पर कटाव करा दिया है। "चारधाम रोड" के तहत हजारों पेड़ कट चुके हैं और सिलिग सड़कों के निर्माण के लिए पर्वतों में विस्फोट करके मार्ग बनाए गए हैं। परिणामस्वरूप

आसपास के क्षेत्र की प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति बढ़ गई है। DownToEarth हिन्दी रिपोर्ट में बताया गया है कि 12-24 मीटर चौड़ी सड़कों के लिए पहाड़ों के गहरी कटाई ने अनेक भूस्खलन क्षेत्र उत्पन्न किए हैं।

चित्रात्मक रूप से देखें तो चारधाम परियोजना का पर्यावरणीय प्रभाव इस सारणी से स्पष्ट होता है:

प्रस्तावित चौड़ाई	पेड़ कटाई (हेक्टेयर)	कटाव गहराई (मीटर)	पर्यावरणीय समस्या
12 मीटर (पुराना मानक)	~690 (लगभग)	गहरी कटाई (~24 मी)	कई भू-स्खलन क्षेत्र, वन्यजीव विस्थापन
8 मीटर (परिवर्तित मानक)	बहुत कम (<100 हेक्टेयर)	मामूली कटाई (~7-8 मी)	पर्यावरण अनुकूल मार्ग निर्माण संभव

दूसरी मुख्य समस्या है **अत्यधिक भीड़भाड़**। सड़क सुलभता ने तीर्थयात्रियों की संख्या में भारी वृद्धि की है। इसके लिए नए होटल, ढाबे, ढांचे वनक्षेत्रों में बनाए गए, जिससे वनों की कटाई हुई। इससे स्थानीय पारिस्थितिकी के साथ-साथ कार्बन उत्सर्जन में भी वृद्धि हुई है। उदाहरणतः हाल ही में उत्तराखण्ड में वनाग्नि की घटनाएं बढ़ी हैं, जिनमें अधिकांशत: पाइन वृक्षों की कटाई होने के कारण तेजी से आग भड़की।

जल संकट भी विकराल मुद्दा बन गया है। हिमालयी ग्लेशियर के तेज पिघलने से शुरू में बाढ़ एवं बाद में सूखे की आशंका है। ग्लोबल सत्ताधिकारियों ने उल्लेख किया है कि उत्तराखण्ड में ग्लेशियरीय झीलों की संख्या में गिरावट और विस्फोट की घटनाएं बढ़ी हैं। 2023 के सिक्किम ल्होंग ग़ेझ धीर एनघो झील विस्फोट ने पर्यावरणीय चुनौतियों की भयावह तस्वीर दिखाई है; उत्तराखण्ड में भी ऐसी आपदाओं की संभाव्यता उच्च है।

सारांशतः, **ग्लोबल वार्मिंग, पर्यटन-संचालन, अव्यवस्थित विकास** हिमालय पर संकटमय दबाव बना रहे हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए सांस्कृतिक चेतना के दो पहलू महत्वपूर्ण हैं:

- पारम्परिक तीर्थयात्रा के नियमों को पुनः सक्रिय करना (जैसे स्वच्छता व्रत, वन-रक्षा निर्देश)।
- आधुनिक योजनाओं में नैतिक दृष्टिकोण जोड़ना (जैसे पर्यावरण-अनुकूल सड़कें, हरित पट्टी बनाए रखना)।

सांस्कृतिक नीतिगत सुझाव एवं व्यवहारिक अनुशंसाएँ

प्राचीन परम्पराओं और आधुनिक विज्ञान का समन्वय करके हिमालयीय रक्षा के निम्न उपाय प्रस्तावित किए जा सकते हैं:

- **हरित संरक्षण जोन:**

उत्तराखण्ड सरकार को अब हिमालयी प्रकृति के अनुरूप पर्यावरण नीति बनानी चाहिए। उदाहरणतः *हिमालयी राज्य क्षेत्रीय परिषद* ने 12 हिमालयी राज्यों के लिए पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन नीति तय करने का बीड़ा उठाया है। इन नीतियों में **पर्यावरणीय संवेदनशील जोन** (Eco-sensitive Zones) के और विस्तार, पर्यटन स्थलों पर वाहन सीमित करना, और हरित पट्टियाँ बनाना शामिल हों। अध्ययन बताता है कि सड़क किनारे हरे-भरे क्षेत्रों (ग्रीन बेल्ट) को बनाए रखना प्रदूषण और भूस्खलन को कम करने में मदद करता है।

- **स्थानीय भागीदारी एवं शिक्षा:**

स्थानीय ग्रामीण एवं तीर्थयात्रियों को जागरूक करने हेतु *"भारतीय संस्कृति में प्रकृति की पूजा"* विषय पर कार्यशालाएँ आयोजित की जाएँ। मंत्रित विज्ञापन और सोशल मीडिया पर *"स्वच्छता ही सेवा"* जैसे संदेश फैलाएँ। स्थानीय विद्यालयों में पारम्परिक प्राकृतिक ज्ञान (जैसे योगी ऋषियों का पंचमहाभूत महत्व) पढ़ाया जाए। इससे पुराने धर्मग्रंथों जैसे स्कन्दपुराण की शिक्षाएँ व्यवहारिक आधार देंगी।

- **पर्यावरण-अनुकूल निर्माण तकनीक:**

चारधाम सड़क निर्माण के लिए 'इंटरमीडिएट लेन' (7– 8 मी) का उपयोग करना पर्यावरणीय दृष्टि से उचित है। मानक चौड़ाई (12 मी) को घटाकर न्यूनतम करना चाहिए। साथ ही लंबी कटिंग के स्थानों पर **टनल निर्माण** पर ज़्यादा जोर होना चाहिए, ताकि वनस्पति को कम क्षति हो। उदाहरणः स्थानीय ख़बरें बताती हैं कि इंटरमीडिएट लेन अपनाने से 70– 80% कटाव कम किया जा सकता है।

- **पर्यटन प्रबंधन:**

तीर्थयात्रा को पूरी तरह विकसित अर्थव्यवस्था के रूप में देखने के बजाय स्थायी पर्यटन (Sustainable Tourism) पर बल दिया जाए। होटल-ढाबों का निर्माण वन भूमि में करने की बजाय स्थानीय गाँवों में सीमित रखा जाए। 'ग्रीन टैक्स' और *सीमित प्रवेश टिकट* जैसे उपाय जारी रहे। अनियमित निर्माण को नियंत्रित करने हेतु कानून एवं निगरानी सख्त करें।

- **वैज्ञानिक अनुसंधान एवं सहयोग:**

उत्तराखण्ड में पर्यावरणीय अनुसंधान को बढ़ावा दिया जाए। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान (NIHE) जैसे संस्थाएँ ग्लेशियर अध्ययन एवं आपदा-प्रबंधन में सहयोग करें। *हिमालयी राज्य क्षेत्रीय परिषद* ने नेपाल के ICIMOD के वैज्ञानिकों के साथ काम करने की योजना बनाई है; इसी तरह भारतीय संस्थाएँ भी अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से हिमालय सर्वे करें।

इन सुझावों में स्थानीय परम्परा का आदर हो तथा आधुनिक आविष्कारों का संयोजन हो। उदाहरणतः देवस्थानम बोर्ड के साथ मिलकर तीर्थयात्रा नियम बनायें, जिन्हें धार्मिक ग्रंथों से प्रमाणित किया जाए। पारम्परिक पूजा-संस्कृति (जैसे *पिंडदान, हरे तीर्थ बनाए रखना*) को संरक्षण के औजार के रूप में इस्तेमाल किया जाए।

निष्कर्ष

केदारखण्ड (स्कन्दपुराण) को केवल एक तीर्थ पुराण न मानकर **पारिस्थितिक चेतना का प्राचीन स्रोत** माना जा सकता है। इसमें हिमालय, पर्वत, वन, नदियाँ तथा पूजनीय स्थलों को देवी-देवताओं की अधिष्ठात्री शक्तियों के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि प्रकृति का विनाश नहीं, संरक्षण ही धर्म है। देवी के विभिन्न स्वरूपों (गरुड़, गज, हिम) में जैव-विविधता के प्रतीक निहित हैं, और 'सशैलवनकाननम्' जैसी संकल्पनाएँ संकेत देती हैं कि पृथ्वी, पर्वत-वन मानव जीवन के अभिन्न अंग हैं।

आधुनिक संकटों के समय में, यह धार्मिक ज्ञान हमें यह स्मरण कराता है कि विकास के साथ प्रकृति संतुलन महत्वपूर्ण है। उत्तराखण्ड में चारधाम मार्ग जैसे अलोकतांत्रिक विकास से बचने के लिए हमें **प्राचीन सांस्कृतिक आदर्शों** को मजबूती से लागू करना चाहिए। हिमालय के प्रति हमारी सांस्कृतिक परंपराएं ही पर्यावरण-संवेदनशीलता की स्थापना कर सकती हैं। अतः *केदारखण्ड* जैसे ग्रंथों के इको-क्रिटिकल और सांस्कृतिक पारिस्थितिकीपरक अध्ययन से हमें समकालीन पर्यावरणीय नीतियों एवं व्यवहारों के लिए नैतिक-नैतिक आधार मिलता है।

संदर्भ

1. स्कन्दपुराण (केदारखण्ड), अध्याय 35, श्लोक 41। *"मया मुक्तापि सा धारा श्रीमुखे गिरौ... खण्डिता वहवोऽद्रव।"* – इस श्लोक के अनुवाद में गंगा की तीव्र धारा द्वारा पर्वत खण्डन का वर्णन है।
2. भगवती प्रसाद पुरोहित, "विलुप्त होती गंगा और गंगाएं", *इंडिया वाटर पोर्टल (हिंदी)*, 2 फरवरी 2010। (केदारखण्ड श्लोक का संदर्भ एवं आधुनिक पर्यावरणीय अवलोकन)
3. AWGP, "अध्यात्म का ध्रुव केन्द्र – देवात्मा हिमालय", *अखंड ज्योति पत्रिका* (अप्रैल 1985)। (उत्तराखण्ड को हिमालय का हृदय बताने एवं हिमालय की महत्ता का वर्णन)
4. India Water Portal – Hindi, "हिमालयी राज्यों में पर्यावरण के अनुरूप बनेगी पर्यावरण नीति", 22 जनवरी 2020। (हिमालयी राज्यों के लिए पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन नीति का प्रस्ताव)
5. Gurinder Kaur, "How to mitigate the impact of melting glaciers in Uttarakhand?", *India Water Portal (English)*, 7 दिसंबर 2024। (उत्तराखण्ड में ग्लेशियर्स का तेजी से पिघलना और सड़क निर्माण का पर्यावरणीय प्रभाव)
6. S.P. सती, "चार धाम मार्ग परियोजना: पर्यावरणीय विभीषिका के पीछे बुनियादी चूक", *डाउन टू अर्थ (हिंदी)*, 31 जुलाई 2020। (चारधाम परियोजना की कटाई का मानव और पर्यावरण पर प्रभाव)
7. Cheryll Glotfelty एवं Harold Fromm (संपादक), *The Ecocriticism Reader*, University of Georgia Press (1996)। (इको-क्रिटिसिज्म की परिभाषा और सिद्धांत – साहित्य तथा पर्यावरण के संबंध का अध्ययन)
8. Julian H. Steward, *Theory of Culture Change*, University of Illinois Press (1955)। (सांस्कृतिक पारिस्थितिकी – मानव संस्कृति और पर्यावरण के संयुक्त विकास का सिद्धांत)